प्रवाह
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

केवल वही यात्रा असंभव है, जो आपने अभी तक शुरू नहीं की...
...टोनी रॉबिंस, अमेरिकी लेखक

ईवीएम पर सवाल उठाकर विपक्ष चुनाव आयोग जैसी उस सांविधानिक संस्था की गरिमा कम कर रहा है, भारतीय लोकतंत्र को पारदर्शी बनाने में जिसकी असंदिग्ध भूमिका है।

ईवीएम के दौर में मतपत्र?

पिछले कई विधानसभा चुनावों में भाजपा की भारी जीत को अविश्वसनीय बताते हुए विपक्षी पार्टियां ईवीएम की जगह मतपत्रों के जरिये चुनाव कराने की मांग करती आई हैं, पर अब उन्होंने एकजुट होकर चुनाव आयोग के पास जाने और लोकसभा चुनाव मतपत्रों के जरिये कराने की मांग करने का जिस तरह फैसला किया है, वह हैरान करता है। इन दलों में तृणमूल भी है, और उसकी विरोधी माकपा भी, टीडीपी भी है और उसकी प्रतिद्वंद्वी वाईएसआर कांग्रेस भी। विपक्ष अपने अभियान में शिवसेना को भी साथ लेने का आकांक्षी है, क्योंकि उद्धव ठाकरे भी लोकसभा चुनाव मतपत्रों के जरिये कराने की मांग कर चुके हैं। अन्नाद्रमुक, बीजद और टीआरएस विपक्ष की इस मुहिम का हिस्सा नहीं हैं। पर ज्यादा हैरान करने वाली बात यह है कि इस मुहिम में वह कांग्रेस सबसे आगे है, जिसके दौर में ही ईवीएम की व्यवस्था लागू की गई थी। ईवीएम के आने से मतदान प्रणाली में क्रांतिकारी बदलाव आए, जो पारदर्शी लोकतंत्र के प्रति हमारी प्रतिबद्धता का ही सुबूत है। इससे बूथ कब्जाने की घटनाओं पर रोक लगी, मतदान का प्रतिशत बढ़ा और मतों की गिनती में लगने वाला समय आश्चर्यजनक रूप से बहुत कम हो गया। पूर्वोत्तर के उग्रवाद प्रभावित क्षेत्रों से लेकर कश्मीर के आतंकवाद प्रभावित इलाकों तक में लोगों में मतदान के प्रति आकर्षण बढ़ा, तो इसका श्रेय ईवीएम को जाता है। विपक्ष का आरोप है कि भाजपा ईवीएम हैक कर चुनाव जीत रही है। पर यह साबित करने के लिए उसके पास ठोस सुबूत नहीं हैं। चुनाव आयोग कह चुका है कि ईवीएम को हैक करना संभव नहीं, फिर वीवीपैट उसकी निष्पक्षता की अतिरिक्त गारंटी देता है। आयोग ने विपक्षी दलों को ईवीएम हैक करके दिखाने की चुनौती दी थी, पर कोई ऐसा कर नहीं पाया। ऐसे में, ईवीएम पर संदेह करना चुनाव आयोग पर भी सवाल उठाना है,

हमारे लोकतंत्र की पारदर्शिता में जिसकी असंदिग्ध भूमिका है। ईवीएम के दौर में बैलेट पेपर से चुनाव कराने की मांग करना पीछे लौटना तो है ही, विपक्ष भूल रहा है कि मतपत्रों के जरिये मतदान में भी कोई कम गड़बड़ियां नहीं थीं। जाहिर है, जब तक विपक्ष कोई ठोस सुबूत पेश नहीं करता या उसके आरोप को कानूनी आधार नहीं मिलता, तब तब उसकी मांग को गंभीरता से लेने का कोई कारण नहीं बनता।

चुनाव आयोग की ताकत

चुनाव आयुक्त आज वैसे बेबस नहीं हैं, जैसा वे 1980 के दशक की टकराव वाली कार्यपालिका के सामने होते थे। आज उद्यमशील चुनाव आयुक्त अपने अधिकारों पर जोर देकर और कार्यपालिका के समक्ष न झुककर चुनाव आयोग की प्रतिष्ठा को और ऊंचा उठा सकते हैं।

विकसित देशों में संस्थाओं के बारे में बौद्धिक और लोकप्रिय विमर्श प्रायः संस्थानों पर कब्जे और क्षरण जैसे दो कथानकों पर केंद्रित होता है। हालांकि भारतीय निर्वाचन आयोग ईमानदारी से काम करता है और उसने सफलतापूर्वक अपनी शक्ति भी बढ़ाई है। चुनाव आयोग की इस सफलता का मतलब क्या है?

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से 16 राष्ट्रीय (लोकसभा) और 350 से अधिक विधानसभा चुनाव संपन्न कराने वाला चुनाव आयोग भारत का व्यापक रूप से सराहा गया विश्वसनीय लोक संस्थान है, जिसके पास समुचित अधिकार हैं और जिसे दुनिया की कुछ लंबी चुनाव प्रक्रियाओं को पूर्ण करने का श्रेय जाता है। चुनाव आयोग हमेशा से इतना प्रमुख और शक्तिशाली नहीं रहा है। 1950 में इसकी स्थापना के बाद से इसके स्वरूप में बदलाव आया है। आमतौर पर सार्वजनिक संस्थान और विशेष रूप से चुनाव आयोग किस तरह से अपनी शक्ति बढ़ाने में सक्षम हैं, इसे समझना महत्वपूर्ण है, क्योंकि समाजों पर किस तरह का शासन होता है, यह इस पर निर्भर होता है कि उनके सार्वजनिक संस्थान उनसे की गई अपेक्षाएं किस तरह पूरी करते हैं। किसी ऐसे समाज में ऐसी अपेक्षाओं को कमतर नहीं आंका जा सकता, जहां की राजनीति विवादों से जकड़ी हो। भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था और राज्य, दोनों ने ही नियमित स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों के जरिये अपनी वैधता अर्जित की है, जिन्हें संपूर्ण कराने के लिए चुनाव आयोग पूरी तरह से जिम्मेदार है।

सुसान ओस्टरमैन

अमित आहूजा

जहां हम यह जानते हैं कि नौकरशाही पर राजनीतिक नियंत्रण की सीमाएं हैं, वहीं संस्थागत शक्ति के विस्तार को ठीक से नहीं समझा गया है और इन संस्थानों के व्यवहार को नियंत्रित करने वाले आंतरिक और बाहरी प्रोत्साहनों को सिद्धांत रूप में समझना अभी बाकी है। यह बात

चुनाव आयोग के मामले में भी हाल तक सच थी, जब तक कि देवेश कपूर, प्रताप भानु मेहता, डेविड गिलमार्टिन, एरिस्टर मैकमिलन, ऑर्निट शानी, रॉबर्ट मूग, ईश्वरन श्रीधरन और मिलन वैष्णव के काम सामने नहीं आए। हमने यह समझने की कोशिश की कि चुनाव आयोग ने किस तरह से अपने मैंडेट (अधिकार) का विस्तार किया और आदर्श आचार संहिता और चुनाव प्रक्रिया की अवधि के जरिये अपनी शक्ति और हैसियत बढ़ाई। 1990 के दशक के बाद से आदर्श आचार संहिता को कड़ाई से लागू किया जा रहा है और लोकसभा तथा विधानसभा चुनावों की अवधि में तेजी से वृद्धि हुई है। चुनाव आयोग के चुनावी डाटा के विश्लेषण के साथ ही हमने छह मुख्य चुनाव आयुक्तों, चार मुख्य निर्वाचन अधिकारियों, चुनाव आयोग के आठ अधिकारियों, विभिन्न राजनीतिक दलों के साठ नेताओं तथा पदाधिकारियों और उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र तथा तमिलनाडु के सैकड़ों मतदाताओं के साक्षात्कार लिए।

आंकड़े बताते हैं कि एक संघीय लोकतंत्र में मैंडेट का विस्तार कम से कम तीन शर्तों पर निर्भर करता है। पहली, सांस्थानिक बाधाएं कमजोर होनी चाहिए, जैसा कि 1989 से 2014 के दौरान कांग्रेस पार्टी के प्रभुत्व कम होने और गठबंधन सरकारों के उभार के समय कार्यपालिका की स्थिति थी। दूसरी, राज्य के प्रतिभागियों को सक्षम और स्वतंत्र मध्यस्थ की मांग करनी चाहिए, जैसा कि 1990 और 2000 के दशकों में पार्टी व्यवस्था में विखंडन और विस्तार के समय राज्य आधारित पार्टियों ने किया था। तीसरी, उद्यमशील नौकरशाही के प्रतिभागियों को राजनीतिक अवसरों से उत्पन्न क्षणों का लाभ उठाना चाहिए, जैसा कि टी एन शेषन ने 1990 के दशक की शुरुआत में किया था, जब उन्होंने मुख्य निर्वाचन आयुक्त का कद सुप्रीम कोर्ट के जज के बराबर कर लिया, चुनाव पर्यवेक्षकों और मतदाता पहचान पत्र की शुरुआत की और कार्यकारी निर्देशों को मानने से इनकार कर दिया। लेकिन कार्यपालिका के ताकतवर होकर उभरने के दौरान क्या होता है? 2014 के लोकसभा चुनाव ने नरेंद्र मोदी की अगुआई में भाजपा को संसद में मिले बहुमत के साथ तीस वर्ष बाद फिर से कार्यपालिका को मजबूती के साथ उभरते देखा। हमारा शोध दिखाता है कि एक मजबूत कार्यपालिका को मजबूती के साथ सामने लाना ही था और फिर से अपना प्राधिकार दिखाना ही था, जो चुनाव आयोग ने वर्षों से उससे छीन लिए थे। इसके बावजूद इस बात का श्रेय चुनाव आयोग की अर्जित विश्वसनीयता को दिया जाना चाहिए कि यहां तक कि एक मजबूत कार्यपालिका को भी चुनाव आयोग के संस्थागत प्राधिकार को खुले में चुनौती देने से बचना पड़ा।

इसलिए हैरत नहीं होनी चाहिए कि कार्यपालिका ने लचीले रुख वाले चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति कर चुनाव आयोग के अधिकारों को कम करने का रणनीतिक रास्ता निकाला। पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त ए के ज्योति के दो फैसलों को इस संदर्भ में देखा गया। पहला था 2017 में गुजरात विधानसभा चुनाव के दौरान आदर्श आचार संहिता लागू करने में हुई देरी, जोकि चुनाव आयोग की अपनी परंपरा के विपरीत थी, जिससे आरोप लगाया गया कि इससे वहां की भाजपा सरकार को नए कार्यक्रमों की घोषणा करने का अधिक समय मिला। दूसरा फैसला आम आदमी पार्टी के 20 विधायकों को अयोग्य ठहराने से संबंधित था। गुजरात और दिल्ली के इन फैसलों से चुनाव आयोग की छवि पर असर पड़ा। लेकिन चुनाव आयुक्त आज उस तरह से बेबस नहीं हैं, जैसा कि वे 1980 के दशक की टकराव वाली कार्यपालिका के सामने होते थे। आज उद्यमशील चुनाव आयुक्त अपने अधिकारों पर जोर देकर और कार्यपालिका के समक्ष न झुककर चुनाव आयोग की प्रतिष्ठा को और ऊपर उठा सकते हैं। अपने अधिकारों पर जोर देने के लिए चुनाव आयुक्त भारत की राष्ट्रीय और क्षेत्रीय पार्टियों के लिए किसी निगरानी संगठन की मांग कर सकते हैं।

यदि चुनाव आयुक्त और मुख्य चुनाव आयुक्त खुद ही चुनाव आयोग की संस्थागत स्वायत्तता को उन्हें नियुक्त करने वाली कार्यपालिका से सुरक्षित रखने के प्रति अनिच्छुक होंगे, तो फिर उन्हें अपने अधिकारों और प्रतिष्ठा के लिए संघर्ष करना होगा।

*-**सुसान ओस्टरमैन** यूनिवर्सिटी ऑफ नोट्रे डैम और **अमित आहूजा** कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी से संबद्ध हैं।*

छात्र गणित को उबाऊ न समझें

अपनी कहानी

>> अक्षय वेंकटेश

अधिकांश गणितज्ञ गणित को विज्ञान के दूसरे विषयों के समान मानते हैं। मैंने हमेशा से यही कोशिश की है कि छात्रों को गणित के व्यापक संदर्भ समझाते हुए इसे अधिक आकर्षक और प्रासंगिक बनाया जाए।

छत्तीस साल पहले मेरा जन्म दिल्ली में रहने वाले एक तमिल ब्राह्मण परिवार में हुआ था, लेकिन मैं पला-बढ़ा ऑस्ट्रेलिया में। दरअसल मैं जब दो साल का था, तभी मेरा परिवार भारत से ऑस्ट्रेलिया के पर्थ शहर में बस गया था। मेरी मां कंप्यूटर साइंस की प्रोफेसर हैं। गणित के प्रति मेरा रुझान शुरू से ही रहा या यों कहें कि अपनी जिंदगी के बारे में मेरी स्मृति जिस समय रेखा तक जाती है, गणित के प्रति दिलचस्पी तभी से मेरे साथ है।

बीस वर्ष की उम्र में पूरी की पीएच. डी.

मात्र बारह साल की उम्र में मैंने गणित और भौतिकी के अंतरराष्ट्रीय ओलंपियाड में पदक जीता था। और उसके अगले वर्ष यानी तेरह की उम्र में ही मुझे यूनिवर्सिटी ऑफ वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया में प्रवेश मिल गया। अगले तीन साल में मैं यूनिवर्सिटी का सर्वश्रेष्ठ ग्रेजुएट स्टूडेंट बन चुका था। हालांकि स्नातक में मैंने जिन विषयों की पढ़ाई की, वे भौतिकी और इलेक्ट्रिक इंजीनियरिंग से जुड़े थे, मगर कोर्स के अंत तक मैंने तय कर लिया था कि मुझे पेशेवर गणितज्ञ ही बनना है। गणित के प्रति दीवानगी ने ही मुझे बीस वर्ष की उम्र में पीएच. डी. डिग्री धारक बना दिया।

ईमानदारी से जुटा रहा

जब मैंने पीएच. डी. में प्रवेश लिया था, तब मैं इस बात को लेकर आश्वस्त नहीं था कि मुझे गणितज्ञ होने के नाते कोई ढंग की नौकरी मिलेगी। मैंने सोच रखा था कि मैं बिना किसी हड़बड़ी के इस क्षेत्र को पर्याप्त समय दूंगा, फिर भी अगर कुछ हासिल नहीं हुआ, तो किसी दूसरे क्षेत्र में हाथ आजमाऊंगा। सौभाग्य से इसकी नौबत नहीं आई। धैर्य के साथ किए गए ईमानदार प्रयासों ने अपना रंग दिखाया।

गणित उबाऊ नहीं है

गणित में 'नंबर थ्योरी' मेरा पसंदीदा क्षेत्र है। इसे 'क्वीन ऑफ मैथेमेटिक्स' कहा जाता है। मेरा काम इस थ्योरी के कई ऐसे पहलुओं पर है, जो अभी तक सामने नहीं आए थे। लोगों को लगता है कि गणित बहुत उबाऊ है। ऐसा है नहीं, इसमें कई मजेदार चीजें हैं। यदि आप चाहें, तो ज्यामिति, कैलकुलस और सममिति के किसी भी समीकरण को आनंद के साथ हल कर सकते हैं। दिक्कत यह है कि छात्रों को गणित के वास्तविक सिद्धांत न बताकर कुछ और ही पढ़ाया जाता है। अधिकांश गणितज्ञ इसे विज्ञान के दूसरे विषयों के समान मानते हैं। मैंने हमेशा से यही कोशिश की है कि छात्रों को गणित के व्यापक संदर्भ समझाते हुए इसे अधिक आकर्षक और प्रासंगिक बनाया जाए।

यह पदक पाने वाला दूसरा ऑस्ट्रेलियाई

गणित का नोबेल कहे जाने वाले प्रतिष्ठित फील्ड पदक पाने से पहले मुझे इस क्षेत्र के कई अन्य सम्मानों से नवाजा जा चुका है, जिनमें ओस्ट्रोस्की पुरस्कार, इंफोसिस पुरस्कार, सलेम पुरस्कार और रामानुजन पुरस्कार शामिल हैं। मैंने 2004 से 2006 तक न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर के रूप में कार्य किया। मैं फिलहाल कैलिफोर्निया की स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी में पढ़ा रहा हूं। मैं खुद को बहुत खुशकिस्मत मानता हूं, क्योंकि फील्ड पदक पाने वाला मैं सिर्फ दूसरा ऑस्ट्रेलियाई व्यक्ति हूं। मुझसे पहले 2006 में डॉक्टर टेरेंस ताओ को यह पदक मिला था।

-भारतवंशी ऑस्ट्रेलियाई गणितज्ञ के साक्षात्कारों पर आधारित।

फैक्ट फाइल

जिम्बाब्वे

>> जिम्बाब्वे का राष्ट्रीय ध्वज

रॉबर्ट मुगाबे ने जिम्बाब्वे पर सैंतीस साल तक तानाशाह की तरह शासन किया।

जिम्बाब्वे में हिंसा के बीच हुए चुनावों में मौजूदा राष्ट्रपति एमर्सन मैनगाग्वा फिर से विजयी हुए हैं। उनकी जानू-पीएफ पार्टी को संसद की 210 सीटों में से 109 सीटें मिली हैं और मुख्य विपक्षी दल मूवमेंट फॉर डेमोक्रेसी को 41 सीटें। जिम्बाब्वे दक्षिण अफ्रीका में चारों ओर से घिरा हुआ देश है। इसकी सीमाएं दक्षिण अफ्रीका, बोत्सवाना, जाम्बिया और मोजाम्बिक को छूती हैं। इसकी आबादी मुश्किल से एक करोड़ साठ लाख है। यह देश लंबे समय तक ब्रिटिश उपनिवेश रहा। 1965 में इसके प्रधानमंत्री इयान स्मिथ ने ब्रिटेन के शासन से एकतरफा संबंध तोड़कर रोडेशिया नाम से इस देश के स्वतंत्र होने की घोषणा की और अल्पसंख्यक श्वेत शासन की अगुआई की। मगर इससे यह अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अलग-थलग पड़ गया। इसके बाद यहां अश्वेत राष्ट्रवादियों ने उनके शासन के खिलाफ विद्रोह कर दिया, जिससे वहां गृहयुद्ध छिड़ गया। आखिरकार अप्रैल, 1980 में वहां शांति समझौते के बाद आम चुनाव कराए गए, जिसमें जानू-पीएफ पार्टी विजयी हुई और रॉबर्ट मुगाबे प्रधानमंत्री बने। इसके साथ ही वहां श्वेत अल्पसंख्यक शासन का अंत हो गया। 1987 में मुगाबे राष्ट्रपति बन गए और 2017 तक इस पद पर रहे। उनके कार्यकाल में जिम्बाब्वे आर्थिक रूप से बदहाल हो गया। उनकी पार्टी ने उन्हें सत्ता से बेदखल कर उनकी जगह 19 नवंबर, 2017 को उपराष्ट्रपति एमर्सन मैनगाग्वा को राष्ट्रपति नियुक्त कर दिया था।

नदी घाटी में भूख

कंबोडिया के सीम पैंग जिले की तकदीर मैकांग नदी से जुड़ी हुई है, जो हर वर्ष भयानक तबाही लाती है।

न्यूयॉर्क टाइम्स के लिए जुलिया वैलेस, लेन लेंग

कांग गैन को पता नहीं कि बांध क्या है। वह तो अपनी उम्र के बारे में भी ठीक-ठीक नहीं बता पाती। लेकिन वह जानती है कि सेकांग नदी के साथ सब कुछ अच्छा नहीं है। कंबोडिया के सीम पैंग जिले की तकदीर मैकांग की इस सहायक नदी से जुड़ी हुई है, जो मानसून के समय उफनने लगती है, और अक्तूबर में कगार तोड़कर बहती है। लेकिन इस बार तीन महीने पहले ही सेकांग ने पिछले सप्ताह सीम पैंग में कहर ढाना शुरू किया, जिससे हजारों लोगों को विस्थापित होना पड़ा। दरअसल पड़ोस के लाओस में एक बांध के टूट जाने से उसके एक प्रांत अट्टापेउ का बड़ा हिस्सा जलमग्न हो गया, जिस पर पूरी दुनिया की नजर गई। लेकिन कंबोडिया में हुए नुकसान पर ध्यान कम ही गया।

बाढ़ से सीम पैंग के लोगों की परेशानियां बढ़ गई हैं, लेकिन उन्हें न तो सरकार से कोई राहत मिली है, न ही बांध बनाने वाले बहुराष्ट्रीय निगम ने उनकी मदद की। कांग गैन को किसी ने नहीं बताया कि इस बाढ़ की वजह क्या है, हालांकि आसपास के कुछ लोगों ने यह अफवाह सुनी कि बाढ़ का

यह पानी अट्टापेउ से आया है। कांग गैन का जीवन वैसे ही बेहद तकलीफदेह है, तिस पर बाढ़ उसकी नई सिरे से परीक्षा ले रही है। धान का उसका छोटा-सा खेत और सब्जी का बगीचा बर्बाद हो गया है। कांग गैन के परिवार को घर में रखे चावल से भूख मिटानी पड़ रही है, जबकि निकट भविष्य में खेती कर पाने की भी कोई संभावना नहीं है। दक्षिण पूर्वी एशिया में इस तरह की त्रासदी आम है। ये देश लाभप्रद जलविद्युत परियोजनाओं को अपनाते हैं; इसमें उन्हीं नदियों का इस्तेमाल होता है, जिस पर वहां के लोग अपने अस्तित्व के लिए निर्भर हैं।

सीम पैंग को 3 एस बेसिन कहते हैं, जहां सेकांग, सेसैन और श्रेपोक नदियों का गाद जमा होता है, और जिस कारण यहां दूर-दूर तक हरियाली है। 3 एस बेसिन मेकांग नदी के विशालतम और महत्वपूर्ण जल संभरण क्षेत्रों में से है। इंटरनेशनल यूनियन फॉर द कंजर्वेशन ऑफ नेचर ने इसे तीस लाख से भी अधिक लोगों के लिए अनाज मुहैया कराने का इलाका बताया है। लेकिन इस क्षेत्र में अब जलविद्युत परियोजनाओं की संख्या बढ़ रही है। पिछले पच्चीस साल में यहां की नदी घाटियों में साठ से अधिक ऐसी परियोजनाएं तैयार हो चुकी हैं। इस प्रक्रिया में नदियों का रास्ता बदला गया है। नतीजतन कभी बहुतायत में पाई जाने वाली मछलियां लुप्त होने लगी हैं। यहां और पचास बांध बनने हैं, जिनमें से कुछ निर्माणाधीन हैं। सीम पैंग से चालीस किलोमीटर दूर चीन द्वारा वित्तपोषित एक जलविद्युत इकाई ने पिछले साल बिजली उत्पादन शुरू भी कर दिया, लेकिन इस प्रक्रिया में पांच हजार नागरिक विस्थापित हो गए। यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कोन्सिन-मेडिसन में इतिहास के प्रोफेसर इयान बेयर्ड कहते हैं, 3 एस बेसिन के ज्यादातर ग्रामीण अपने अस्तित्व के लिए नदियों और जंगलों पर निर्भर हैं। पहले यहां प्रचुर प्राकृतिक संसाधन थे, लेकिन अब धीरे-धीरे वे लुप्त हो रहे हैं।

इस हफ्ते के शब्द

सीमा नंदा

भारतीय मूल की इस महिला को अमेरिका में मुख्य विपक्षी दल के निर्णायक निकाय, डेमोक्रेटिक नेशनल कमेटी (डीएनसी) का सीईओ नियुक्त किया गया है।

अमारो (AMARO)

इस शब्द को हाल ही में ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में शामिल किया गया है। अमारो एक प्रकार की इतालवी मदिरा का नाम है, जो पाचन ठीक करने में इस्तेमाल की जाती है।

प्रति हजार

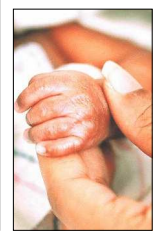

54

का सबसे खराब आंकड़ा है शिशु मृत्यु दर के मामले में मध्य प्रदेश का। नीति आयोग की एक रिपोर्ट के मुताबिक।

सूत्र

>> टिम कुक

एक फोन कॉल बदल सकती है आपकी राह

मैं अलबामा के मोबिले में पैदा हुआ और पड़ोस के कस्बे रॉबर्ट्सडेल में पला-बढ़ा। मेरे पिता शिपयार्ड में नौकरी करते थे, जबकि मां एक फार्मेसी में काम करती थीं। इंडस्ट्रियल इंजीनियरिंग में ग्रेजुएशन करने के बाद आईबीएम के पर्सनल कम्प्यूटर बिजनेस में मैंने बारह साल गुजारे। उसी दौरान एमबीए करने के बाद मैं इंटेलीजेंट इलेक्ट्रॉनिक्स में सीओओ (चीफ ऑपरेटिंग ऑफिसर) बन गया। 1998 में एक दिन मेरे पास एक कॉल आई, जिसने मेरा जीवन बदल दिया। फोन पर स्टीव जॉब्स थे, जो चाहते थे कि मैं एपल जॉइन कर लूं। मेरे पुराने साथियों ने हालांकि मुझे कॉम्पैक में ही बने रहने की सलाह दी, लेकिन मेरे भीतर से आवाज आई कि स्टीव जॉब्स जैसे जीनियस के साथ काम करना मेरी पूरी जिंदगी के लिए यादगार अनुभव होगा। उनके साथ मेरी पहली मुलाकात पांच मिनट से ज्यादा नहीं चली। एपल में सीनियर वाइस प्रेसिडेंट के पद पर मेरी नियुक्ति होते ही मैंने कंपनी की सारी फैक्टरियां और गोदाम बंद करवा दिए। उनकी जगह कांट्रेक्ट मैन्यूफैक्चरर्स ने ले ली। इससे कंपनी के खर्च में बहुत कमी आई। कंपनी के खर्च कम करने के अलावा डिजाइनिंग और मार्केटिंग के क्षेत्र में मेरे शानदार काम को सराहा गया। इन सबसे कंपनी का मुनाफा भी बढ़ा। 2007 में मुझे कंपनी के ऑपरेशंस को नेतृत्व देने की जिम्मेदारी मिली और 2009 में मैं चीफ एक्जीक्यूटिव बन गया। उस दौरान स्टीव जॉब्स मेडिकल लीव पर थे। 2011 में जॉब्स को चेयरमैन बनाए जाने पर मैं एपल का सीईओ नियुक्त हुआ।

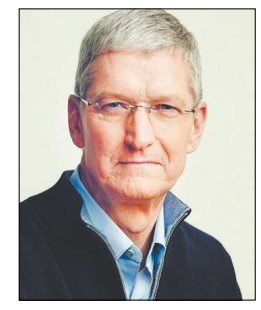

कुछ समय बाद पैनक्रियाज कैंसर से जॉब्स की मौत हो गई। मैंने कंपनी में बेहतर माहौल बनाने की कोशिश की। एक समय शेयरधारकों को मुझे यहां तक कहना पड़ा कि अगर वे सतत विकास और जलवायु परिवर्तन से संबंधित कंपनी की नीतियों से सहमत नहीं हैं, तो बाहर जा सकते हैं। मैंने जहां एपल को नवीकरणीय ऊर्जा गतिविधियों से जोड़ा है, वहीं मेरे नेतृत्व में कंपनी ने परोपकार के क्षेत्र में डोनेशन बढ़ाया है। अब एपल दुनिया की पहली ट्रिलियन डॉलर कंपनी भी बन गई है।

कुछ लोग नवाचार को बदलाव के तौर पर देखते हैं, जबकि मेरे लिए यह लोगों का जीवन बेहतर बनाने का जरिया है।